Conclusion

उपसंहार उपसंहार उपसंहार उपसंहार उपसंहार

उपसंहार उपसंहार उपसंहार उपसंहार

उपसंहार

उपसंहार उपसंहार उपसंहार उपसंहार

उपसंहार उपसंहार उपसंहार उपसंहार उपसंहार

रामदरश मिश्र जी की सरलता सहज है । उसमें कुछ तो इस देश की पुरानी मिट्टी का संस्कार है । कुछ उसका नैसर्गिक शील है, संकोच है, कुछ उसकी गहरी जीवन दृष्टि है । उन्होंने न केवल गद्य साहित्य पर अपितु पद्य साहित्य पर भी रचनाएं लिखी हैं ।

मिश्र जी ने अपने जीवन की सुख-दुख पूर्ण घटनाओं को कथा रूप देकर निरूपण किया है । हमारी इस स्थापना की पुष्टि उनकी आत्मकथा (जो सद्य प्रकाशित हुई है) के बहुत सारे प्रसंगो से पुष्ट होती है । प्रारम्भ से ही उनके जन्म के समय चींटियों से घिरे रहने वाली घटना का उल्लेख उन्होंने "अकेला मकान" कहानी में किया है । अपने बाल्यकाल के जीवन का संकेत "पानी के प्राचीर" उप0 तथा "जल टूटता हुआ" उप0 में किया है । अपने जीवन के अनुभव के अनुसार होने वाली मकान की समस्या को "पराया शहर" कहानी में उद्घृत किया है । इसके अलावा कुछेक अन्य घटनाओं का उल्लेख भी इनके कथा-साहित्य में मिलता है ।

मिश्र जी की अधिकांशत: कथा-साहित्य "आत्म शैली" में मिलता है । वे अपने जीवन की वास्तविक व यथार्थ घटनाओं का चित्रण दूसरों के माध्यम से न करके स्वयं अपने को मुख्य पात्र बनाकर आत्म-कथात्मक शैली के द्वारा करते है ।

राम-दरश मिश्र ने किसी भी ऐसे घटना क्रम को नहीं छोड़ा है । जिसका उन्होंने वर्णन नहीं किया है । उनकी लेखनी गांव, शहर, कस्बे सभी को लेकर चली है । मां, पिता, भाई, बहिन , रिश्ते-नाते, पड़ोसी, मित्र सभी का बखूबी से चित्रण करते चले है । कोई भी इनकी कलम से अछूता नहीं रहा है । उनके लेखनी से अंकित शब्दों को पढ़ने मात्र से सारे दृश्य आंखों के सामने इस प्रकार छा जाते है जैसे कोई भी घटना हमारे सामने घटित हो रही हो, समाजिक, पारिवारिक, राजनीतिक, जमींदारों के प्रति शोषण का चित्रण, मनोवैज्ञानिक आदि सभी तथ्यों का बहुत ही पेचीदा वर्णन मिलता है । ये रोजमर्रा के भी तमाम पदार्थो को समेटते चलते है ।

जैसा कि प्रसाद पर आक्षेप लगाया जाता है कि उनकी कथा-साहित्य पर कवितापन हावी हो गया है लेकिन मिश्र जी के साथ ऐसा नहीं है । मिश्र जी की कहानियों में कवितापन की झलक अवश्य मिलती है लेकिन वह उस पर हावी नहीं होती है । बल्कि उसका अपना एक अलग रास्ता निकलता जाता है जो उससे सम्बन्धित नहीं रखता है ।

मिश्र जी ने अपने कथा-साहित्य में केवल "मुक्ति" कहानी को छोड़कर अन्य कहीं भी नारी को स्वतंत्र रूप से जीते हुए नहीं बताया है चाहे वह शिक्षित हो या अशिक्षित उसको जीवन निर्वाह के लिये पर-पुरूष पर निर्भर रहना ही पड़ता है । अगर वह स्वतंत्र रहना चाहती है तो भी उसके आगे ऐसी परिस्थितियां समाज प्रस्तुत करता है कि उसे अपनी सुरक्षिता के लिये पर-पुरूष का आश्रय लेना पड़ता है परन्तु आज नारियां स्वालम्बी होकर बिना किसी का आश्रय लिये जी रही है । समाज की परिस्थितियों का भी डर कर मुकाबला कर रही है । प्रेमचंद ने विधवाओं की तथा समाज के निम्न वर्ग की हीन दशा को समाज के सामने लाकर रखने से ही केवल कथाकार के कर्तव्य की इति श्री नहीं होती वरन् उन्होंने उसके समाधान के लियेकई संस्थाओं की स्थापना का प्रयत्न भी किया है । जयशंकर प्रसाद ने "कंकाल" में "तितली" में नारी की दयनीय स्थिति को बताया है । निर्मल वर्मा, की "परिन्दे" कहानी में लतिका को स्वतंत्रपूर्ण से जीवन जीते हुए बताया गया है कि नारी स्वंय अकेली हिम्मत रखकर स्वालम्बी का जीवन बिना किसी पर आश्रित होकर जी सकती है । उषा प्रियवंदा के दोनों उप० "रूकोगी नहीं राधिका" "पचपन खंभे लाल दीवारें" में अति आधुनिका पढ़ी-लिखी स्त्री की कथा है किन्तु दोनों ही उपन्यासों में स्त्री स्वतंत्र निर्णय लेने की शक्ति रखने के बावजूद अजीब बेवसी और समाजिक घिराव में अपने को बंद पाती है । "मन्नू-भंडारी" ने "आपका बंटी" में तलाक-शुदा, पति-पत्नी के प्रश्न को बच्चे की समस्या उठायी है । लेकिन इसमें भी नारी को बेबसी और पीड़ा की ही तस्वीर को उभारा है ।

मिश्र जी ने भी "रात के सफर" उप० में ऋतु को पढ़ी-लिखी लड़की होने के कारण परिस्थिति के वश बाध्य न करके स्वयं स्वतंत्र रूप से जीने का आवहान देते है ।

मिश्र जी के कथा-साहित्य में मुख्यतः शोषित ग्रामीण तथा नागरिक समाज की दारूण दशा के चित्र है । उस पर अत्याचार करने वाले शोषण वर्ग का परिचय देते समय अथवा दोनों वर्गो के संघर्ष का चित्रण करते समय वे शोषकों के पीछे प्रेरक, शोषक शक्ति का स्वरूप उद्घाटित करते है ।

आज भी भारतीय नागरिकों में शहरी सुख की लिप्सा सर्वोपरि है । खेती लोगों की दृष्टि में किसी सीमा तक अल्प-फल दायिनी और गौरव हीन कृति है। इस भीषण संकट से पार पाने का यही मार्ग है कि गांव का जीवन सरल, सुविधा जनक हो, खेती के साधन आधुनिक हो और जीवन मूल्यों की दृष्टि से श्रम शारीरिक श्रम के महत्व एवं महिमा को मुक्त भाव से स्वीकार किया जाये ।

मिश्र जी ने समाज के त्रस्त वर्ग के लिये पाठकों की सहानुभूति जागृत की है और त्रासकों पर व्यंग्य किया है । केवल इतना ही नहीं - उन्होंने उनके साथ ही समाज की गिरी हुई दशा को सुधारने वाले तत्वों को भी सक्रिय रूप से प्रदर्शित किया हैं । समाज में व्याप्त अंधकार को दूर करने के लिये सुदृढ़ श्रम तथा अनवरत प्रयत्न करने में सफलता भी प्राप्त की है ।

मिश्र जी ने कथनानुसार वस्तुतः इस देश की सारी समस्याएं ट्रॉफिक की तरह एक पुल पर केन्द्रीयकृत होती जा रही है और समस्याएं भी बढ़ती जा रही है । इस व्यवस्था की यही अव्यवस्था एक दिन इसे ले डूबेगी । आजीविका की तलाश का प्रश्न गांव के युवक, अधेड़, और वृद्ध सभी के सामने अपने जटिल रूप में प्रस्तुत है। जिसकी तलाश के लिये वे शहरों की तरफ पलायन कर है । आखिर इसका उपचार भी क्या है ? आज समय आ गया है कि देश के नेता इन समस्याओं की भयावहता पर गहन विचार करे अन्यथा समाज स्वंय मजबूर होगा । मंहगाई पूज की चांद की तरफ प्रतिदिन बढ़ती चली जा रही है लेकिन नेता लोग अकर्मव्य रूप से देखते हुए भी अपने भाषाणों, वक्तव्यों और काफ्रेंसों में व्यस्त है ।

मिश्र जी ने केवल अपनी भावनाओं व जीवन के अनुभवों घटनाओं का उल्लेख मात्र ही नहीं किया है वरन् समाज में फैले हुए दुष्परिणाम को देखकर अत्यन्त ही चिन्तित होते हैं । प्रत्येक साहित्यकार अपनी साहित्यिक परम्पराओं की उपज होता है । प्रतिभाशाली कलाकार परम्परा को आत्मसात करता हुआ उसमें अपना योगदान भी देता हैं । श्रेष्ठ साहित्य केवल भावना की अभिव्यक्ति मात्र न होकर उसकी कलात्मक अभिव्यक्ति भी होता है ।

मिश्र जी ने अपने सम्पूर्ण कथा-साहित्य में यह भली-भांति व्यंजित करने का प्रयत्न किया है कि आज व्यक्ति पहली बार सभी सम्बन्धों को तोड़कर अपने अस्तित्व को पहचानने की कोशिश करने लगा है । व्यक्ति स्वातंत्र्य के इस नवीन मूल्य ने पुराने सभी मानव सम्बन्धों को एकाएक परिवर्तित कर दिया । सभी पारिवारिक सम्बन्धों

में टूटन व अलगाव की स्थिति आयी है । व्यक्ति का आत्म निष्ट रूप भी आधुनिक जीवन मूल्यों की ही देन है जिसके कारण वह सभी सम्बन्धों से विरक्त होकर अधिकाधिक आत्म केन्द्रित होता जा रहा है ।

इस प्रकार मिश्र जी के समस्त कथा साहित्य में प्रवर्तमान ग्रामीण और महा-नगरीय जीवन छवियों का प्रमाणित एवं संतुलित चित्रण हुआ है ।

सारांशतः कहा जा सकता है कि इस प्रकार मिश्र जी ने अपने पुरावर्ती लेखकों की परम्परा का पिष्ठ-पेषण न करके अपने इर्द-गिर्द परिवेश के सम्पूपबन्ध जीवन्त छवियों का यथार्थ अंकन करके अपने सासक्षमता का परिचय दिया है ।

.....

साक्षात्कार

प्रश्न : 1 क्या नारी केवल समर्पण का ही रूप है ? यदि उसे पुरुष केवल थोड़ी ही सहानुभूति दिखावे तो वह शुद्ध मन से उस पर पूर्ण रूप से समर्पित होती ही चली जाती है । जैसे- चल टूटता हुआ उप0, सूखता हुआ तालाब, उप0 हद से हद तक क0, एक अधूरी कहानी, बेला मर गयी ।"

उत्तर : यह ठीक है कि नारी समर्पणता की मूर्ति है । वह अपना कर्तव्य समझकर तन मन से समर्पित होकर सब कुछ निभाती जाती है । क्योंकि उसको बचपन से संस्कार ही इस प्रकार से पिलाये जाते है । वह अपना स्वार्थ को त्याग कर पुरुष की सेवा करतीहै । लेकिन बदले में उसे तिरस्कार मिलता है । फिर भी वह उसको चुपचाप सहा करती जाती है बनिस्बत विद्रोह करने के ।

प्रश्न : 2 आपने ज्यादातर ग्रामीण जीवन की आर्थिक समस्याओं को पेश किया है । परन्तु इन समस्याओं का समाधान किस प्रकार हो सकता है जबकि गांव में भी शिक्षित वर्ग के लोगों का निवास है लेकिन उनको रोजगार न मिलने के कारण शहर की तरफ जाना पड़ता है । इतनी मुश्किल में निम्न वर्ग यह सोच कर पढ़ता है कि उसे नौकरी मिलने पर सब ठीक-ठाक हो जायेगा । लेकिन ऐसा नहीं होता। आखिर शिक्षा से भी फायदा क्या ?

उत्तर : आजकल शिक्षा का प्रचार-प्रसार सब जगह हो रहा है । गांव में लोग पढ़ रहे है । लेकिन पढ़ने के बाद नौकरी मिलना मुश्किल बात है । क्योंकि जनसंख्या इतनी अधिक हो गयी है । जिससे सबको नौकरी मिलना बहुत मुश्किल काम हो गया है । लेकिन फिर भी सरकार की तरफ से ग्रामीण उद्योग-धंधों को बढ़ावा दिया जा रहा है । ताकि गांव स्वावलम्बी हो सके । शिक्षा कभी भी बेकार नहीं जाती यदि नौकरी नहीं मिलती है । फिर भी ज्ञान की प्राप्ति तो होती है ।

प्रश्न : 03. गांवों को टूटने से कैसे बचाया जा सकता है ?

उत्तर: जैसा कि ऊपर बताया गया है । गांवों में सुधार के लिये प्रयत्न किये जा रहे है । जब गांव स्वालम्बी हो जायेगें तो गांव स्वंय ही बच जायेगें । लोगों को रोजगार के लिये गांव छोड़कर नहीं जाना पड़ेगा ।

प्रश्न : 04. आप कविताकार पहले है या कहानीकार ? क्योंकि आपकी कहानियों पर भी कवितापन झलकता है । आजकल आप किस रूप को लेकर लिखते है ?

उत्तर : मैंने पहले कविता लिखनी शुरू की, बाद में कहानियां, कविता में केवल भाव व्यक्त किये जाते है । कहानी में उसका विस्तार किया जाता है ।
लेकिन कहानियों में भी कहीं कहीं पर कवितापन की झलक आती है । आजकल गद्य रूप में ही ज्यादा लिखता हूं ।

प्रश्न : 5 किसी कृति को रचते समय आप को कभी ऐसा भी महसूस हुआ कि उसे रचते समय स्वंय भी रचे जा रहे है । आपके सामने भीतरी व बाहरी सत्यों के नये अर्थ खुल रहे है और अपने भीतर घटित हो रहे रूपान्तरण से आपको असीम आत्मतुष्टि का अनुभव हो रहा है।

उत्तर : रचना-प्रक्रिया का स्वरूप अपने आप में ऐसा होता है । ऐसा लगता है रचना अपना रूप धारण कर रही है । जैसा रचना से पहले सोचा था । कई बार वह अपने सहज क्रम में ऐसा रूप ले लेती है । जो अप्रत्याशित नहीं होता है । ऐसा लगता है, नई चीज आ गयी है । जिसकी कल्पना भी नहीं की थी । यह सही है कि रचना करते समय ही रचना अपना रूप स्पष्ट करती है । लेखक स्वंय भी इस प्रक्रिया से गुजरता है, नया सीखता है ।

प्रश्न : 6 रचना-प्रक्रिया क्या है ? Theme क्या है ? किस प्रकार आप उस पर विचार करते है । एक बार लिखने के बाद उसमें संशोधन भी करते है या एक ही बैठक में लिखते है ।

उत्तर : रचना द्वारा व्यक्त होने वाला पहले से मन में साफ नहीं होता है । उसका एक स्थूल स्वरूप पहले से मन के भीतर होता है । लिखने से पहले मैं उस स्वरूप को कोई निश्चित आकार नहीं दे पाता । किसी प्रकार खाका तैयार नहीं करता, उस स्थूल स्वरूप के भीतर कहीं से घुस जाते है । उसे रचनात्मक स्वरूप देना आरम्भ करता हूं । रचना समाप्त करते-करते ऐसा रूप भी हो जाता है । जो नया होता है । एक छोटी रचना भी कई बैठक में लिखते है । कई बैठके अनुभव के तार को हीन नहीं करती। रचना लिख लेने के बाद उसे कई बार पढ़ते है । आवश्यकतानुसार उसमें कुछ संशोधन भी करते है । कई बार अंत में भी बदलना पड़ता है । अंत बहुत ही महत्वपूर्ण अंश होता है । अत: उसमें विशेष ध्यान देना पड़ता है । कई बार ऐसा लगता है की बात मेरे मन में भी वह प्रभावशाली ढंग से नहीं हुई तो उसे और ढंग से लिखने की कोशिश करते है । जब लगता है कि यह मन चाहा प्रभाव व्यक्त कर रही है , तो संतोष होता है ।

प्रश्न : 7 करुण दृश्य को तुरन्त ही देखकर लिखते है या परिस्थिति के साथ लेखन कार्य करते है ?

उत्तर : कोई भी दृश्य चाहे करुण हो या अन्य प्रकार का, एकाएक कहानी में नहीं उतरता है । किसी भी विषय के अनुभव से समय की एक दूरी रचना के लिये आपेक्षित होती है । यह दूरी अनुभव के तत्कालीन अफवाह को छांट देती है । इस दूरी के बाद जब रचना बनती है । तब उसमें दृश्यों की ओर विशेषत: करुण दृश्यों की उत्तेजना के स्थान पर उनके अनुभव की गहराई ही विशेष होती है। कई बार दृश्य अनेक वर्षों तक मन में उमड़ते-घुमड़ते रहे है । वे किसी अनुकूल अवसर पर उनकी रचना कर देते है ।

प्रश्न : 8 "आखिरी चिठ्ठी" अतीत का विष" "एक अधूरी कहानी" आदि की प्रेरणा आप को कहां से मिली ?

उत्तर: इन कहानियों का आधार परिवेश में ही रहा है । उनके ही दुख दर्द के आधार पर ही कहानी को रचाया गया है । कहानियों के पात्र मूलतः में हमारे अपने अनुभव में आये हुए पात्र है । इन्हें मैंने एक अभिप्रेत प्रभाव देने के लिये रचा है ।

प्रश्न : 09. आकाश की छत" किन परिस्थितियों पर लिखा गया ?

उत्तर: यह यथार्थ अनुभव के आधार पर ही लिखा गया है ।

प्रश्न : 10. "अपने लोग" उप0 में सच्चाई व कल्पना का कितना अंश है ?

उत्तर: यह उपन्यास काल्पनिक ज्यादा है ।

प्रश्न : 11. आपने नारियों को पीटने की बात की है । क्या इसके अतिरिक्त आप अलग नहीं सोच सकते है ?

उत्तर: यह बहुत ही दुखद परिवेश है । स्त्रियों के प्रति पुरुषों का व्यवहार समानवीय नहीं है । भिन्न-भिन्न वर्गों में उनमें यातना के रूप को देखकर परेशान हो उठता था ।

प्रश्न : 12. नारी को भी sex - satisfication की जरूरत पड़ती है । आपने नारी को इस रूप में क्यों प्रस्तुत किया है ? (हद से हद) क0 " मुक्ति" प्रतीक्षा क0 ।

उत्तर: शरीर का अपना धर्म होता है । स्त्रियां अपने संकोचवश अपने यौन आकंशा को दबाये रखती है । जहां उन्हें ऐसा लगता है किसी स्वार्थवश उनका ब्याह नहीं किया जा रहा है तो उनका जातीय संकोच को वाणी दी है । मानवीय स्तर पर उन्हें इस बात का अधिकार है कि उन्हें किसी प्रकार का स्वार्थ का औजार बनकर नहीं रहे । स्वार्थ की वजह से उन्हें अविवाहित रखो है तो वह विद्राह करे ।

प्रश्न : 13. गांव की नारियां व शहरी जीवन की नारियां पति के प्रति "सम्मान" के भाव में क्या अंतर है ?

उत्तर : गांव में अभी भी पति परमेश्वर की भावना है क्योंकि उन्हें सोचने की शिक्षा नहीं है, न ही वे आत्मनिर्भर है घर से निकालने के डर से वे पति के प्रति विरोध नहीं करती है । शहर

में भी स्थिति भिन्न है । यहाँ पर लड़कियाँ पढ़-लिखकर नया संस्कार पा लेती है तथा पैरों पर खड़ी होती है । संस्कार इतने बद्ध मूल हो गये है कि पढ़ने से जाता नहीं है । पढ़-लिख कर वह नये सिरे से सम्बन्धों को समझना चाहती है । यदि पढ़ने के बाद अपने पैरों पर खड़ी है तो परिवार वालों का विरोध करने की शक्ति आती है ।

प्रश्न : 14. आपकी सर्जन-प्रक्रिया को उद्वेलित करने वाला तत्व कौन सा है ? दुख या प्रसन्नता ? नारी व्यक्ति दुख या समष्टि दुख ।

उत्तर: दुख से ज्यादा प्रभावित होते है । मानवीय दर्द ज्यादा मिलता है । लेखक की मानसिकता इस प्रकार की हो तो उसे दुख बहुत प्रभावित करता है । दुख हमारे संस्कार में बद्ध हुआ है कि दुख को देखकर आन्दोलित हो उठते है ।

प्रश्न : 15. आप प्रभीवतः समष्टि चेतना के उपन्यासकार है । ऐसा कहा जा सकता है अर्थात आप प्रभीवतः व्यक्ति चेतना अंहवादी चरित्रों के चित्रण कवि नहीं है ।

उत्तर : समाजिक चेतना के रचनाकार है । समाज में घटित होने वाले दुख-सुख ज्यादा आन्दोलित करते है । समाजिक समस्याएं ज्यादा परेशान करती है । घटनाएं, संदर्भ आदि सभी का समाजिक अर्थ होता है । ऐसा ग्रहण करते है । समाज-प्रेक्षक परितत्वों को घेरना इनके रचनाओं को प्रिय नहीं है ।

प्रश्न: 16. क्या आपको आलोचकों से शिकायत है ? पाठको की ओर से प्रतिक्रियाएं मिलती है । आपका प्रतिभाव क्या/कैसा होता है । प्रत्युक्त देते है ?

उत्तर : बहुत शिकायत है, दलबद्ध है । वे सही रचनाओं को रेखांकित करने के स्थान पर अपने दल के जुड़े लेखकों पर महत्व आरोपित करते है । कम से कम साहित्यकार सही प्रदर्श पाठक के सामने नहीं खुलता

लेकिन पाठक आलोचक के इशारे पर नहीं चलता । उसे जो चीज छूती है, जो प्रभावित करती है । उसे ही छूते है । रचना का गन्तव्य पाठक ही होता है । पाठकों ने रचनाओं को प्यार दिया है । जो संतोष जनक है ।

प्रश्न: 17. आपका कवि आप के कथा-साहित्य पर हावी हो जाता है । ऐसा लगता है अत: आप नीरे बुद्धिवादी न कहा पाकर संवेदनीय शील उपन्यासकार कहलाते है ।

उत्तर : कवि कथाकार पर हावी होता है । यह ठीक बात नहीं है। वे अपनी ओर से कथा को अधिक सशक्त करने के लिये कवि को नियोजित करते है । कथा की आन्तरिक दुनिया है । वह पात्रों का मानसिक मन्थन है । परिवेश का जो सौंदर्य है । उसे सुन्दर ढंग से स्थापित करने के लिये ही मेरा कवि कथाकार की दुनियाऐं उगाता है किन्तु यदि पाठक को ऐसालगता है । मेरे कथाकार के सहायता करने के बजाय हावी हो जाता है । यह अच्छी बात नहीं है । वास्तव में ऐसा है क्या ?

प्रश्न : 18. आप मनो-विश्लेषण वादी न होकर मनोभावों की बिम्बात्मक रूप में प्रस्तुत करते है ।

उत्तर: यह कथन सही है । यहां चेतन की अपेक्षा अवचेतन के पर्तों का उद्घाटन किया जाता है पात्र बहुत दूर तक समाज निरपेक्ष बन जाता है । मेरे पात्र तो समाज के प्रतिनिधि पात्र होते है । उनके माध्यम से समाजिक मन में उठने वाले विविध रागात्मक, चेतनात्मक, व्यथात्मक, संम्वेगों को स्थापित करना ही मेरे लेखक की चिन्ता होती है ।

प्रश्न : 1. मूल्यों से आप क्या समझते है ? क्या मूल्य का नाश होता है या रूपान्तरण होता है ?

उत्तर: मूल्यों की अनेक परिभाषायें है। मेरी दृष्टि में मूल्य, चेतना, व्यवहार या सम्बन्ध है जो व्यक्ति और समाज के जीवन को उन्नत बनाता है। एक परम्परागत ढंग से इसे नैतिकता या आदर्श भी कह सकते है। लेकिन नैतिकता और आदर्श कुछ ऊपरी लगते है। किन्तु मुल्य जीवन यर्थाथ की कशमकश के भीतर से उभरता है।

जब कोई मुल्य एकदम अप्रासंगिक हो उठता है। या मानो कि प्रगति के साधक के स्थान पर बाधक बन पड़ता है तो वह अपनी सार्थकता खो बैठता है। यदि वह जिन्दा रहता ही है। तो केवल एक रूढ़ के रूप में। वास्तव में नये जीवन संदर्भ ऐसे मूल्यों का निषेध करते है। किन्तु यदि इन मूल्यों में प्रमाणिकता बची होती है। तो नये संदर्भों में उनका नया संस्कार भी किया जा सकता है। अतः मूल्य मरते भी है। नये संस्कार भी पाते है और सर्वथा नये मूल्य बनते है।

प्रश्न : 2. व्यक्ति जीवन, परिवारिक जीवन, समाजिकजीवन और राष्ट्रीय व वैश्विक जीवन के मूल्यों के विषय में बताईये ?

उत्तर : दरअसल यदि देखा जाये तो जो गहरे मानवीय मूल्य होते है वे एक ही साथ व्यक्ति, समाज, राष्ट्र और अखिल विश्व सबको उन्नत करते है। जैसे- गांधी जी का सत्य, अहिंसा वाला मूल्य है। यह मूल्य गांधी जी के व्यक्तित्व को उन्नत कर सका। हमारे समाज और राष्ट्र के जीवन के लिये भी इसने आलोक प्रदान किया और हिंसा अनेक राष्ट्रों के स्वार्थ में टकराहटों से लहुलुहान, अखिल मानव जाति के लिये भी यह कल्याणकारी है। लेकिन कई बार व्यक्ति और समाज और राष्ट्र और विश्व के मूल्यों में टकराहट भी हो जाती है। जब कोई व्यक्ति समाज के किसी बनी बनायी मूल्य

प्रवृत्ति से टकराता है । तब वह समाज विरोधी सा दिखायी पड़ता है । जैसे - नव जागरण काल में अनेक ऐसे मनीषी आये जिन्होने अपनी नयी चेतना के तह समाज में मूल्य के नाम पर व्याप्त मूल्य रूढ़ियों का विरोध किया तो ऐसा लगा कि व्यक्ति का मूल्य समाज के मूल्य से अलग रहा है । इसी प्रकार राष्ट्रीय जीवन में कई बार राजनैतिक मूल्य, समाजिक मूल्यों से टकराते हुए दिखायी पड़ते है और एक राष्ट्र के मूल्य दूसरे राष्ट्र से टकराता है । इस प्रकार व्यक्ति और समाज के बीच मूल्यों की लय बनती बिगड़ती रहती है । लेकिन समग्रत: जब मूल्य स्वीकृत हो जाते है तो कुछ समय तक समाज और व्यक्ति दोनों में वे समान भाव से उपस्थित रहते है ।

प्रश्न : 3. पुराने मूल्यों व नये मूल्यों में क्या अंतर है ? जब नये मूल्य आते ह तो पुराने मूल्यो का नाश हो जाता है या दब जाते है ।

उत्तर : मूल्य बदलते रहते है और मूल्यों के बदलाव के पीछे नयी परिस्थितियां और उनसे उत्पन्न नयी सोच व चिन्तन होता है । एक समय में जो चीज मूल्य के रूप में दिखायी पड़ती है । दूसरे समय में वह मूल्य की रूढ़ मात्र रह जाती है । मूल्य नये है, पुराने है, सबका उद्देश्य अपने समय के समाजिक जीवन का स्वस्थ संचालन ही होता है । इसीलिये एक समय में हम समाजिकजीवन के हित में साधक मानते है । वे बाद में बाधक लगने लगते है । एक समय वर्ण-व्यवस्था पर आधरित समाज का स्वरूप अच्छा माना गया है और इन चारों वर्गो के बीच कुछ विशेष समन्वय हो, आचरण आदि को मूल्य की संज्ञा दी गयी होती । आज वर्ण-व्यवस्था पर आधरित समाज का स्वरूप हमारें लिये सही नहीं है, मालुम पड़ता है । इसी लिये वर्ण व्यवस्था से सम्बन्धित जो मूल्य निश्चित किये गये है । वे आज अमानवीय लगते है । वे मूल्य ही नहीं लगते है । अब उनके

स्थान पर वर्तमान जीवन के अनुरूप नये मूल्यों का उभार हो रहा है । आज दलितों-स्त्रियों तथा तमाम अभिशप्त लोगों के मानवीय अधिकारों की बात उठायी जा रही है । जो मूल्य के रूप में लक्षित हो रही है । ऐसे ही कल की अनेक बातें आज बदल गयी है और उनसे सम्बन्धित मूल्य या तो अर्थहीन हो गये हैं या उनके भीतर निहीत सम्भावनाओं या नये मूल्यों का विकास हो रहा है । या एकदम नये मूल्य बन रहे है ।

प्रश्न : 4. आपने अपने उपन्यासों में कुछेक स्थानों पर मूल्यों से जूझने वाले पात्रों का चित्रण किया है किन्तु उसकी विजय का प्रदर्शन नहीं किया गया है ऐसा क्यों ?

उत्तर : जो मानवीय मूल्य है उनके लिये जुझने वाला व्यक्ति जुझता है। यह भी अपने आप में पर्याप्त है । मुल्य हीन हो रहे समाज की भारी जमात से लड़ता हुआ कोई मूल्य धर्मी व्यक्ति अपने जीवन में विजयी हो जाये - यह आवश्यक नहीं है । सत्य के लिये लोगों को कुर्बानी देनी पड़ती है । देनी पड़ी है, विजयी दिखा देना काम आसान तो है लेकिन लेखक को यह भी देखना होता है कि विशेष समय में एक नया उभरता हुआ मूल्य या मूल्य हीन की भीड़ में गुजरता हुआ कोई मूल्य धर्मी व्यक्ति उस समय विजयी हो जाने की संभावना रखता है या नहीं । विजयी होने के लिये मूल्य धर्मी होना ही काफी नहीं होता है । मूल्य धर्मी का संगठित होना भी काफी होता है । आपने देखा होगा कि "जल टूटता हुआ" में मध्यवर्गीय सतीश मूल्य की लड़ाई अकेला लड़ता है । इसीलिये वह महीपसिंह से अपने खेतों की रक्षा नहीं कर पाता औरउनके अत्याचार का शिकार होता है । किन्तु निम्न वर्गीय जग-पतिया एक संगठन से जुड़ता है और संगठन से प्राप्त शक्ति के द्वारा वह महीपसिंह के अत्याचारों के विरूद्ध प्रतिकार करता है । इसीलिये एक अर्थ में वह

विजयी भी होता है । लेखक अपने उपन्यास में मूल्यों की विभिन्न छवियों को अंकित करता है और यह भी पहचान कराता है, कौन सा मूल्य किस रूप में सफल, असफल रहता है । इन सफलता, असफलता मूल्यों का निर्णायक नहीं है, निर्णायक है सार्थकता ।

प्रश्न : 5. भावी मनुष्य की परिकल्पना क्या है ? क्या आप समझते है । भावी समाज निकट भविष्य में बदला हुआ या परिष्कृत रूप में होगा ?

उत्तर : भावी मनुष्य, क्या होगा, उसका ठीक-ठीक निर्णय करना किसी के हाथ में नहीं है । यह तो समय ही बतायेगा कि आज का मनुष्य कल क्या होगा । लेकिन निश्चित है कि मनुष्य निरन्तर बदल रहा है और कल भी बदलेगा । कई बार ऐसा भी होता है कि एक प्रतिक्रिया स्वरूप मनुष्य अपनी तेज गति वाले बदलाव का विरोध करने लगता है । विज्ञान, औद्योगिक आदि के कारण मनुष्य में जो तेज बदलाव आ रहा है, हो सकता है कि वह एक जगह पर जाकर रुक जाये और मनुष्य फिर जीवन की सादगी की ओर लौटे । हो सकता है, कोई किस बदलाव का चरम उसे विनाश की ओर ले जाये । इन सबके बदलाव के बावजूद, सारी भागमभाग के बीच में भी मनुष्य कुछ बुनियादी अर्थों में मनुष्य तो बना ही रहेगा जैसे, जो प्यार, घृणा, वात्सल्य, पारस्कृत सम्बन्ध या अन्य मानवीय गुण किन्हीं किन्हीं अंशों में रहेगा ही ।

प्रश्न : 6. समस्याओं का निरूपण है, फिर भी लगता है कि आप समस्यामूलक उपन्यासकार नहीं है । क्या आप इससे सहमत है । (लक्ष्मी नारायण को नाटककार, प्रेमचन्द को समस्याकार कहा जाता है ।)

उत्तर : समस्या का हल व्यक्तिगत स्तर पर नहीं हो सकता है । इसीलिये प्रेमचन्द ने भी बाद में यह काम छोड़ दिया था । हल उन समाजिक समस्याओं के भीतर से और उस समय के यथार्थ से निकलना चाहिये । लेखक को आरोपित नहीं करना चाहिये ।

प्रश्न : 7. आपका लेखन कार्य का उद्देश्य क्या है, क्या पिड़ित लोगों को देख कर व्यथित हो उठते है। इस दृष्टि से या जन-जागृति के उद्देश्य से या अपनी आत्म-तुष्टि के लिये ?

उत्तर : इन तीनों का कोई विरोध नहीं है लेकिन यह बात सही है। हर लेखक अपनी रचना से आत्म-तुष्टि अनुभव करता है और यह उस लेखन का बड़ा उद्देश्य होता है। आत्म-तृप्ति होती है। अपने को अभिव्यक्त करने से। किन्तु अपने का अर्थ सीमित भी होता है और व्याप्त भी। जिस समाज में हम रहते है उस समाज का एक बहुत बड़ा हिस्सा जो हमारे आसपास है। हमारे भीतर आना-जाता रहता है। वह हमें अपनी समस्याओं अपनी आकांक्षाओं, अपनी स्थितियाँ, अपने सम्बन्धों के यर्थाथ से हमें जोड़ता है। और हमारे अपने का अंग बनता रहता है। इसीलिये अपने को व्यक्त करने का मतलब है। उस परिवेश को व्यक्त करना जिससे हम बने है। जो हमारे भीतर है और जब हम अपने परिवेश से जुड़ते है तो उसकी पीड़ा हमारी पीड़ा बन जाती है। उसे दूर करने की चिंता हमारी चिंता बन जाती है और हमारे लेखन में वह चिंता स्थापित होती रहती है। अतः सारे बिन्दु परस्पर जुड़े हुए है।

{ 30-1-94 में डा० महावीर सिंह चौहाण के घर मिश्र जी द्वारा भेंट वार्ता }